4. 'शमशेर की काव्यानुभूति की बनावट' लेख पर समीक्षात्मक टिप्पणी लिखिए। (15)

अथवा

'रेणु: समय मानवीय दृष्टि' शीर्षक पाठ का प्रतिपाद्य लिखिए।



[This question paper contains 8 printed pages.]

Your Roll No.....

Sr. No. of Question Paper : 3509 C

Unique Paper Code : 12051601

Name of the Paper : हिंदी आलोचना

Name of the Course : B.A. (H) HINDI – CBCS

Semester : VI

Duration : 3 Hours Maximum Marks : 75

Ramanujan College Library New Delhi-110019

छात्रों के लिए निर्देश

1. इस प्रश्न-पत्र के मिलते ही ऊपर दिए गए निर्धारित स्थान पर अपना अनुक्रमांक लिखिए।
2. सभी प्रश्न अनिवार्य हैं।

1. निम्नलिखित गद्यांशों के संदर्भ को स्पष्ट करते हुए व्याख्या कीजिए :- (10+10+10)

(क) भावों की छानबीन करने पर मंगल का विधान करने वाले दो भाव ठहरते हैं- करुणा और प्रेम। करुणा की गति रक्षा की ओर होती है और प्रेम की रंजन ओर। लोक में प्रथम साध्य रक्षा है। रंजन का अवसर उसके पीछे आता है। अतः साधनावस्था या प्रयत्न पक्ष को लेकर चलने वाले काव्यों का बीज भाव करुणा ही ठहरती है। इसी से शायद अपने दो नाटकों में रामचरित को लेकर चलने वाले महाकवि भवभूति ने 'करुण' को ही एकमात्र रस कह दिया। रामायण का बीज भाव करुणा है, जिसका संकेत क्रौंच को मारने वाले निषाद के प्रति वाल्मीकि के मुँह से निकले वचन द्वारा आरंभ में ही मिलता है।

अथवा

हमें सुंदरता की कसौटी बदलनी होगी। अभी तक यह कसौटी अमीरी और विलासिता के ढंग की थी। हमारा कलाकार अमीरों का पल्ला पकड़े रहना चाहता था, उन्हीं की कद्रदानी पर उसका



सत्य-सौंदर्य-बोध को भी विकसित किया। कहानी की इसी ऐतिहासिक भूमिका की मांग है कि वर्तमान परिस्थिति में उसकी सार्थकता की परीक्षा व्यापक संदर्भ में की जाय।

2. आचार्य रामचंद्र शुक्ल की आलोचना शैली पर विचार कीजिए। (15)

अथवा

हिंदी आलोचना के विकास पर प्रकाश डालिए।

3. 'तुलसी साहित्य में सामंत-विरोधी मूल्य' में अभिव्यक्त रामविलास शर्मा के विचारों का मूल्यांकन कीजिए। (15)

अथवा

'कला के तीन क्षण' में निहित मुक्तिबोध के विचारों को स्पष्ट कीजिए।

के अध्ययन से यह साबित नहीं होती। तुलसी की भक्ति समाज के लिए अफीम नहीं थी। वह जन-साधारण का एक साधन थी। भक्त तुलसीदास मूलत: मानववादी हैं और उनके साहित्य की महत्ता वास्तविक सामाजिक संबंधों का वर्णन करने में है।

अथवा

प्रयोग कोई वाद नहीं है। हम वादी नहीं रहे, नहीं हैं। न प्रयोग अपने आप में इष्ट या साध्य है। ठीक इसी तरह कविता का भी कोई वाद नहीं है; कविता भी अपने आप में इष्ट या साध्य नहीं है। अत: हमें 'प्रयोगवादी' कहना उतना ही सार्थक या निरर्थक है जितना हमें 'कवितावादी' कहना। क्योंकि यह आग्रह तो हमारा है कि जिस प्रकार कविता रूपी माध्यम को बरतते हुए आत्माभिव्यक्ति चाहने वाले कवि को अधिकार है कि उस माध्यम



का अपनी आवश्यकता के अनुरूप श्रेष्ठ उपयोग करे, उसी प्रकार आत्म-सत्य के अन्वेषी कवि को, अन्वेषण के प्रयोग-रूपी माध्यम का उपयोग करते समय उस माध्यम की विशेषताओं को परखने का भी अधिकार है। इतना ही नहीं, बिना माध्यम की विशेषता, उसकी शक्ति और उसकी सीमा को परखे और आत्मसात किए उस माध्यम का श्रेष्ठ उपयोग हो ही नहीं सकता।

(ग) परिष्कृत रुचि, आज की परिस्थिति में, सर्वसामान्य नहीं है। आज रुचि को विकृत करने के साधन अनेक हैं और निरंतर उनका प्रसार ही होता जा रहा है। सस्ती पत्रिकाएं, सामान्य से भी सामान्यतर रुचि के लेखक, 'अपील' का आग्रह। ये सारी चीजें रुचि परिष्कार में बाधक हैं। किंतु इन कुरुचिपूर्ण साधनों के विकास के साथ ही इनके प्रति चेतना का अनुपात भी बढ़ता जा रहा है। आज पाठक अच्छी कहानियों की मांग ज्यादा करता

दिख पड़ता है। वह सस्ते स्तरों की कहानी को या तो ध्यान से बाहर कर देता है या उनके समाजघाती होने पर उनकी कड़ी आलोचना करता है। आज के हिंदी कथा साहित्य के पाठक की रुचि पर संदेह करना एक प्रकार की असावधानी (शायद सायास बरती गई!) कही जाएगी।

**अथवा**

साहित्य के रूप केवल रूप्य नहीं हैं बल्कि जीवन को समझने के भिन्न-भिन्न माध्यम हैं। एक माध्यम जब चुकता दिखाई पड़ता है, तो दूसरे माध्यम का निर्माण किया जाता है। अपनी महान जययात्रा में सत्य-सौंदर्य-दृष्टा मनुष्य ने इसी तरह समय-समय पर नये नये कलारूपों की सृष्टि की ताकि वह नित्य विकासशील वास्तविकता को अधिक से अधिक समझ और समेट सके । हमारी इसी ऐतिहासिक आवश्यकता से एक समय कहानी भी उत्पन्न हुई और अपने रूप सौंदर्य के द्वारा इसने हमारे



अस्तित्व अवलबित था और उन्हीं के सुख-दुःख, आशा-निराशा प्रतियोगिता और प्रतिद्वंद्विता की व्याख्या कला का उद्देश्य था। उसकी निगाह अंतःपुर और बंगलों की ओर उठती थी। झोंपड़े और खंडहर उसके ध्यान के अधिकारी न थे। उन्हें वह मनुष्यता की परिधि से बाहर समझता था। कभी इनकी चर्चा करता भी था, पर इनका मजाक उड़ाने के लिए, ग्रामवासी की देहाती वेश-भूषा और तौर-तरीकों पर हँसने के लिए।

(ख) तुलसी के समय का सामाजिक यथार्थ क्या है? उनके समय का सामाजिक यथार्थ जर्जर होती हुई सामंती व्यवस्था है। तुलसी इस व्यवस्था के रक्षक नहीं हैं और सामंतों के उत्पीड़न के विरुद्ध उनकी सहानुभूति साधारण जनों और स्त्रियों के साथ है। उन्होंने स्वयं इस उत्पीड़न का अनुभव किया था। इसलिए यह धारणा कि तुलसी नारी की पराधीनता के हामी थे, ब्राह्मणों के खिलाफ शूद्रों की बगावत में वह ब्राह्मणों के साथ थे, उनके समूचे साहित्य